महाकवि असग और उनकी कृतियाँ

श्रीमती प्रतिभा जैन, आयुर्वेद महाविद्यालय, रीवाँ

प्रतिभा और कल्पनाके धनी महाकवि असग संस्कृत साहित्यके जाज्वल्यामान रत्न हैं। वे मूलतः कन्नड़ निवासी तथा कन्नड़ भाषाके प्रसिद्ध कवि रहे हैं। महाकविने वर्धमानचरितम्के अन्तमें अपने द्वारा रचित आठ ग्रंथोंकी सूचना दी है। किन्तु उनकी नामावली अप्राप्त होनेके कारण उस विषयमें कुछ कहा नहीं जा सकता। आज उनके दो ग्रन्थ, एक महाकाव्य—वर्धमानचरितम्[1] तथा दूसरा पुराण—श्री शान्तिनाथ पुराण[2] उपलब्ध हैं। जयकीर्ति[3] (१००० ई०)ने असग द्वारा रचित कर्णाटकुमारसम्भवका वर्णन किया है, किन्तु यह भी अप्राप्त है। शेष ग्रन्थ अभी भी अज्ञात हैं जो सम्भवतः कन्नड़ भाषाके होगें और दक्षिण भारतके किन्हीं भण्डारोंमें पड़े हों या नष्ट हो गये हों और भाषाकी विभिन्नतासे उनका उत्तर भारतमें प्रचार नहीं हो रहा हो। अभी तक असगके ग्रन्थोंपर संस्कृतकी कोई टीका प्रकाशमें नहीं आई है। बी०बी० लोकापुर[4] ने एक भोजपत्र प्राप्त किया है जिसमें वर्धमानपुराण पर कन्नड़व्याख्यानका उल्लेख है। यह शब्दार्थ और अन्वयसे युक्त है जिसे मूल ग्रन्थको अच्छी तरह समझा जा सकता है। इसके अतिरिक्त, हेलेगीके उपाध्याय परिवारमें कन्नड़व्याख्यासे युक्त वर्धमानपुराण उपलब्ध है।

जीवन परिचय

महाकविने वर्धमानचरितम् और शान्तिनाथपुराणकी प्रशस्तिमें अपना कुछ विशिष्ट परिचय दिया है। इससे इतना स्पष्ट होता है कि असगके पिताका नाम पटुमति और माताका नाम वैरेति था। उनके माता-पिता मुनिभक्त थे। बाल्यकालमें उनका विद्याध्ययन मुनियोंके सानिध्यमें हुआ। उन्होंने श्री नागनन्दी आचार्य और भावकीर्ति मुनिराजके चरणोंमें शिक्षा पायी। कविने वर्धमानचरितम्की प्रशस्तिमें अपने पर ममता-भाव प्रगट करने वाली सम्वत् श्राविकाका और शान्तिनाथपुराणकी प्रशस्तिमें अपने मित्र जिनाप ब्राह्मणका उल्लेख किया है। अतः प्रतीत होता है कि दोनों ग्रंथोंके रचना कालमें महाकवि गृहस्थ ही थे, मुनि नहीं। इसके पश्चात् वे मुनि हुये या नहीं, इसका निर्देश नहीं मिलता है।

महाकविने शान्तिनाथपुराणमें रचना कालका उल्लेख नहीं किया है परन्तु वर्धमानचरितम्में संवत्सरे दशनवोत्तरवर्षयुक्ते श्लोक द्वारा उसका उल्लेख किया है। 'अंकानां वामतो गतिः' के सिद्धान्त के अनुसार दशनवका अर्थ ९१० होता है और उत्तरका अर्थ उत्तम भी होता है, अतः संवत्सरे दशनवोत्तर-वर्षयुक्तेका अर्थ ९१० संख्यक उत्तमवर्षोंके युक्त सम्वत् होता है। अब विचारणीय यह है कि ९१० शक् सम्वत् है या विक्रम सम्वत् है। डा० ज्योति प्रसाद जैन इसे विक्रम सम्वत् (८५३ ई०) मानते हैं क्योंकि

१-२. श्री जीवराज जैन ग्रन्थमाला, शोलापुरने वर्धमानचरितम् और शान्तिनाथपुराण, हिन्दी अनुवादके साथ डा० पन्नालाल जैन साहित्याचार्यके सम्पादनमें, प्रकाशित किया है।

३. डा० एन० एन० उपाध्ये, वर्धमानचरितम्की प्रस्तावना।

४. एच० डी० बेलनकार :—जिनरत्नकोष, पूना, १९४०, पृष्ठ ३३६, ३४०२, ३८१।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९५० ई० के पास पंप, पोन्न, आदि कन्नड़ कवियोंने इनकी प्रशंसा की है। इसलिये इन्हें उनका पूर्ववर्ती होना चाहिये।

इनके आश्रयदाता तमिल प्रदेश निवासी थे। सम्भवतया इन्होंने तत्कालीन पल्लव नरेश नन्दिवोत-रसके चोलसामन्त श्रीनाथके आश्रयमें उनकी विरलानगरीमें आर्यनन्दीके वैराग्य पर वर्धमानचरितम्की रचना की थी। इसी प्रकार शान्तिनाथपुराणकी रचना जिनाप ब्राह्मणके प्रबल आग्रह पर की गई।

ऐसा प्रतीत होता है कि अनेक कन्नड़ लेखक महाकवि असगसे अच्छी तरह परिचित हैं। अनेक कन्नड़ लेखकोंने असगका उल्लेख अपने ग्रंथोंमें किया है। हरिवंशपुराणके कर्ता धवलाने अपने वीरजिनेन्द्र-चरितमें असगका उल्लेख किया है।[1] दुर्गासिंह (१०३१ ई०) ने अपने कन्नड़-पंचतंत्रमें अन्य कवियोंके साथ असगका उल्लेख किया है।[2]

असग शब्द कैसे बना, यह स्पष्ट नहीं है। असग शब्द अगसका पुराना रूप है जिसका अर्थ धोबी होता है[3] किन्तु असग पेशेसे धोबी थे, ऐसा प्रमाण उपलब्ध नहीं होता। डा० उपाध्येके अनुसार असग असंग शब्दका परिवर्तित रूप है।

जैन काव्योंकी परम्परा और विशेषता

प्रारम्भमें जैन कवियोंने अपनी काव्य प्रतिभाका विकास प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओंके द्वारा किया है। कालान्तरमें प्राकृत और अपभ्रंशके साथ ही उन्होंने संस्कृत भाषाको चरित काव्योंके लिए अपनाया और अनेकों चरित काव्य तथा महापुरुषोंकी चारुचरित्रावलि संस्कृतमें निबद्ध की गई। ऐसे महाकवियोंमें असग पहली पीढ़ीके कवि हैं। उनका काव्य कोरा काव्य नहीं है, अपितु एक महापुराणोपनिषद् है।[4]

जैन परम्पराके चरित ग्रन्थोंमें चरितके नायकके वर्तमान जीवनको उतना महत्त्व नहीं दिया जाता जितना उसके पूर्वजन्मको दिया जाता है। इसका कारण यही है कि जीव किस तरह अनेक जन्मोंमें उत्थान और पतनका पात्र बनता हुआ अन्तमें अपने सर्वोच्च पदको प्राप्त करता है। तीर्थंकर बसकर क्या किया, इसकी अपेक्षा तीर्थंकर कैसे बना, इसका विशेष वर्णन होता है। तीर्थंकरके कृतित्वसे तो पाठकोंके हृदयमें केवल तीर्थंकर पदकी महत्ता या गरिमाका बोध होता है। किन्तु बननेकी प्रक्रिया पढ़कर पाठकको आत्मबोध होता है। उसे स्वयं तीर्थंकर बननेकी प्रेरणा मिलती है। कविकी ग्रन्थ रचनाका उद्देश्य अपने पाठकको प्रबुद्ध करके आत्मकल्याणके लिए प्रेरित करना है।[5] महाकविको अपने उद्देश्यमें पर्याप्त सफलता मिली है।

वर्धमानचरितम्का विवरण

वर्धमानचरितम् संस्कृत भाषाका एक महत्त्वपूर्ण काव्य है। यह १८ सर्गोंमें निबद्ध है। इसमें तीर्थंकर महावीरका चरित सैंतीस पूर्वजन्मोंको वर्णनके साथ चित्रित किया गया है। डा० रामजी उपा-

१. असगु महाकइ जे सुमणेहरु वीरजिणेंदचरिउ किउ सुंदरु।
केन्तिय कहमि सुकइगुण आयर गेय काव्व जहिं विरइय सुंदर॥

२. पीसतेनिसि देसेयि नवरसमेयेयल्कोल पुवेत मार्गदिनिलेगे।
नैसेदुवौ सुकविगलेने नेगलदसगन मनसिजन चन्द्रभट्टन कृतिगल॥

३. सं० बी० एस० कुलकर्णी, धारवाड़, १९५०।

४. इत्यसगकृते वर्धमानचरिते महापुराणोपनिषद् भगवन्निर्वाणगमनोनाम।

५. कृतं महावीरचरित्रमेतन् मया परस्वप्रतिबोधनार्थम्।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ध्यायने वर्धमानचरितम्के प्राक्कथनमें लिखा है कि अश्वघोष एवं कालिदासकी परम्परामें कहाकवि असगने वर्धमानचरितम्की रचना की। कविके वर्धमानचरितम्की कथावस्तुके मूल आधार प्राकृत भाषाके तिलोयपण्णत्ति ग्रन्थमें मिलते हैं। दिगम्बर आम्नायके तीर्थंकर और श्लाकापुरुषोंके चरित तिलोयपण्णत्तिके आधार पर ही विकसित हुये हैं। वृत्त वर्णनके रूपमें वर्धमानचरितम्के कथानकका आधार गुणभद्रका उत्तरपुराण जान पड़ता है क्योंकि उत्तरपुराणके ७४ वें पर्वमें वर्धमान भगवानकी जो कथा विस्तारसे दी गई है, उसका संक्षिप्त रूप इसमें उपलब्ध होता है। उनके तत्त्वोपदेशका मूलाधार उमास्वामीका तत्त्वार्थसूत्र, पूज्यपादकी सर्वार्थसिद्धि तथा अकलंक स्वामीका राजवार्तिक जान पड़ता है। समवसरणका विस्तृत वर्णन जिनसेनके महापुराण पर आधारित है। महाकविने पौराणिक वृत्तको काव्यके साँचेमें ढालकर महाकाव्यका स्वरूप दिया है।

आदिपुराणमें महाकाव्यके स्वरूपका वर्णन करते हुये लिखा है कि इतिहास और पुराण प्रतिपादित चरितका रसात्मक चित्रण करना तथा धर्म, अर्थ और कामके फलको प्रदर्शित करना महाकाव्य है।[1] धर्मत्वका प्रतिपादन करना ही काव्यका प्रयोजन है। अतः काव्यके मूलमें धर्म तत्त्वका रहना परम आवश्यक है। इस चरित काव्यमें महाकाव्यके समस्त लक्षणोंका समावेश किया गया है। वर्धमान इसके नायक हैं जो क्षत्रिय कुलोत्पन्न धीरोदात्त नायकके गुणोंसे युक्त हैं। इसका अंगी रस शान्त है। अंग रसके रूपमें शृंगार, भयानक तथा वीर रसका प्रयोग किया गया है। यह नमस्कारात्मक पद्योंसे प्रारम्भ हुआ है और मोक्ष इसका फल है। सर्गोंकी रचना एक ही छन्दमे हुई है। पर सर्गान्तमें छन्दोवैषम्य है। नवम्, दशम्, पञ्चदश और अष्टदश सर्गकी रचना नाना छन्दोंमें हुई है। इस ग्रन्थमें उपजाति, वसन्ततिलका, वियोगिनी, शिखरिणी, वंशस्थ, शार्दूलविक्रीडित, अनुष्टुप्, मालिनी, मन्दाक्रान्ता आदि छन्दोंका प्रयोग हुआ है। इसमें देश, राजा, राज्ञी, पुत्र-जन्म, ऋतु, वन, समुद्र, मुनि, देव, देवियाँ, युद्ध, विवाह, संध्या, चन्द्रोदय, सूर्योदय, तपश्चरण और धर्मोपदेश आदि सभी वर्णनीय विषयोंका समावेष है।

शान्तिनाथपुराणका विरवण

कविकी दूसरी रचना शांतिनाथपुराण है जिसकी रचना कविने वर्धमानचरितके पश्चात् की है। इसका निर्देश उन्होंने ग्रन्थके अन्तमें किया है।[2]

वर्धमानचरितम्में भाषा विषयक जो प्रौढ़ता है, वह शान्तिनाथमें नहीं है पुराण क्योंकि वर्धमानचरितम् काव्यकी शैलीमें लिखा गया है और शान्तिनाथ पुराण शैलीमें। पुराण शैलीमें लिखे जानेके कारण इसमें अधिकांशतः अनुष्टुप् छन्दका प्रयोग हुआ है। इसकी भाषा सरल है पर भाव गम्भीर हैं। आदि पुराणमें प्राचीन आख्यानोंको पुराण कहा गया है, 'पुरातनं पुराणं स्यात्' (आदि १ २१)। पुराणका प्रमुख तत्व पौराणिक विश्वास है। पौराणिक विश्वास प्राचीन परम्परासे प्राप्त होता है। लेकिन इसमें प्रत्यक्ष या परोक्ष रूपसे कथा अवश्य रहती है। पौराणिक कथायें सत्य मानी जाती है। इनका उद्देश्य विभिन्न प्रकारकी वस्तुओं, विश्वासों रीति-रिवाजोंकी उत्पत्ति तथा उपयोगिता समझाना है। पुराणके दो भेद हैं—१.पुराण और २. महापुराण। जिसमें एक शलाका पुरुषका वर्णन होता है, वह पुराण है और जिसमें त्रेसठ शलाका

१. महापुराण सम्बन्धित महागायकगोचरम्।
त्रिवर्गफलसन्दर्भं महाकाव्यं तदिष्यते॥ आदि०, १।६२-६३

२. चरितं विरचय्य सन्मतीयं सदलंकारविचित्रवृत्तबन्धम्।
स पुराणमिदं व्यधत्त शान्तेरसगः साधुजनप्रमोदशान्त्यै॥४१॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पुरुणोंका वर्णन हो, उसे महापुराण कहते हैं। धर्म तत्वका निरूपण रहनेके कारण पुराण धर्मशास्त्र भी कहलाता है। जैन पुराण साहित्य अपनी प्रामाणिकताके लिये प्रसिद्ध है। प्रामाणिकताका मुख्य कारण लेखकका प्रामाणिक होना है। तथ्यपूर्ण घटनाओं पर ही जैन पुराणोंका कथाभाग आधारित है। असम्भव तो कल्पनाओंसे दूर। अधिकांश पुराण ग्रन्थ गुणभद्रके उत्तरपुराण पर आधारित हैं। शान्तिपुराणमें कविने यथार्थ घटनाओंका वर्णन किया है, बीचमें आये हुये सन्दर्भ मर्मस्पर्शी तथा जैन सिद्धान्तका सूक्ष्म विश्लेषण करनेवाले हैं।

शान्तिपुराणमें इस अवसर्पिणी युगके सोलहवें तीर्थंकर श्री शान्तिनाथ भगवानका पावन चरित वर्णित है। श्री शान्तिनाथ चक्रवर्ती और कामदेव पदके धारक थे। तीर्थंकर पद अत्यन्त दुर्लभ पद है। अनेक भवोंमें साधना करनेवाले जीव ही इस पदको प्राप्त कर सकते हैं। महाकवि शान्तिनाथके पूर्वभवोंका वर्णन अत्यन्त विस्तारसे किया है जिससे प्रतीत होता है कि शान्तिनाथके जीवने पूर्वभवोंमें किस प्रकार साधना कर अपने आपको तीर्थंकर पद पर प्रतिष्ठित किया। इस पुराणमें १६ सर्ग हैं जिनमें प्रारम्भके १२ सर्गोंमें उनके पूर्व जन्मोंका वर्णन है और अन्तिम चार सर्गोंमें उनके तीर्थंकर कालका वर्णन है। प्रत्येक तीर्थंकरके पाँच कल्याणक होते हैं—गर्भमें आगमन, जन्म, जिन दीक्षा, कैवल्य और निर्वाण। ग्रन्थमें इन्हीं पाँचोंका वर्णन मुख्य रूपसे किया गया है। इसके १६ सर्गोंमें २३५० श्लोक हैं जिनमें कुछ शार्दूलविक्रीडित, वंशस्थ, उत्पलमाल, हरिणी, प्रहर्षिणी, इन्द्रवंशा, वियोगिनी, वसन्ततिलका, मालिनीमें हैं और शेष अनुष्टुप् हैं। अन्तिम सर्गोंमें जैन सिद्धान्तका विषद वर्णन है। जैन सिद्धान्तका वर्णन तत्वार्थसूत्र और सर्वार्थसिद्धिके आधार पर किया गया है। पन्द्रहवें एवं सोलहवें सर्गमें जैन सिद्धान्तका वर्णन विस्तारसे किया है। कविने शान्तिपुराणमें प्रथमानुयोगकी शैलीको अपनाया है। उन्होंने सिद्धान्त, इतिहास और लोकानुयोगका अच्छा समावेश किया है जिससे यह मात्र कथाग्रन्थ न रहकर सैद्धान्तिक ग्रन्थ भी बन गया है।

साहित्यिक विशेषतायें

अपने ग्रन्थोंमें महाकविने कोमलकान्त पदावलीके साथ-साथ सुभाषितोंका भी यथास्थान प्रयोग किया है। आदिपुराण (२-८७) में सुभाषितोंको महारत्न कहा गया है। एक अन्य सन्दर्भमें सुभाषितको महामंत्र भी कहा गया है (आदि १।८८)। समुद्रसे बहुमूल्य रत्नोंकी उत्पत्तिके समान ही कविके ग्रन्थ समुद्रसे सुभाषित रत्नोंकी उत्पत्ति हुई है। कविने अपने ग्रन्थोंको शृंगार बहुल प्रकरणोंसे बचाकर सुभाषितमय प्रकरणोंसे सुशोभित किया है। अर्थान्तरन्यास या अप्रस्तुत प्रशंसाके रूपमें कविने संग्रहणीय सुभाषितोंका संकलन किया है। ये सुभाषित असग कवि द्वारा ही रचे होनेसे मूल ग्रन्थके अंग हैं। वर्धमानचरितमूमें संसारसे विरक्त, मोक्षाभिलाषी, दीक्षा लेनेको उत्सुक राजा नन्दिवर्धनके बार-बार समझाने पर उसका पुत्र राज्य स्वीकार नहीं करता। इस प्रसंगमें कविने "पिताका वचन चाहे प्रशस्त हो, चाहे अप्रशस्त हो उसे ही करना पुत्रका काम है, दूसरा नहीं[1]" के माध्यमसे सुन्दर सुभाषितका प्रयोग किया है। शान्तिपुराणके सप्तम सर्गमें आया सुभाषित स्त्रियोंकी मनोवृत्तिको बतलाता है।[2]

अलंकार उस विधाका नाम है जिसके प्रयोगके द्वारा रचनाकार पाठकके मनमें अपनी इच्छानुकूल भावना उजागर कर आनन्द संचार करता है। अलंकारके प्रयोगसे कविता कामिनीके सौन्दर्यकी वृद्धि होती है। महाकविने भावोंका उत्कर्ष दिखाने और वस्तुओंके रूप गुण और क्रियाका अधिक तीव्र अनुभव करानेके

१. पितुर्वचो यद्यपि साध्वसाधु वा, तदेव कृत्यं तनयस्य नापरं। (१.२९)

२. स्त्रीजनोऽपि कुलोद्भूतः सहते न पराभवम् (७-८७)

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

लिये अलंकारोंका समावेश किया है। कविने अपने ग्रन्थोंके शब्दालंकार और अर्थालंकारका यथेष्ट प्रयोग किया है। अनुप्रास, यमक, श्लेषोपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा, श्लेष, परिसंख्या, भ्रान्तिमान्, विरोधाभास आदि अलंकारोंसे ग्रन्थ परिपूर्ण है। श्लेषोपमा आदि अलंकारोंके प्रसंगमें रचना कहीं-कहीं दुरूह हो गयी है।

रस काव्यकी आत्मा है। महाकविके ग्रन्थोंमें रसोंका सुन्दर समावेश पाया जाता है। वर्धमानचरितम्का अंगी रस शांत है। इसमें संयोग शृंगारका वर्णन मिलता है किन्तु इसके प्रसंग बहुत सीमित हैं। विप्रलम्भका वर्णनमात्र एक श्लोकमें हुआ है जिसमें त्रिपृष्ठका मरण होनेपर शोक विह्वल स्वयंप्रभा मरनेके लिए उद्यत बतलाई गई है।[1] काव्यमें शान्त रसके अनेक प्रसंग हैं। उदाहरणार्थ—राजा नन्दिवर्धन आकाशमें विलीन होते हुये मेघको देखकर संसारसे विरक्त होता हुआ वैराग्य चिन्तन करता है (सर्ग २। १०–३४)। प्रजापतिका वैराग्य चिन्तन (सर्ग १४।४०–५३) और तर्थकर महावीरका निष्क्रमण कल्याणक (सर्ग १७।१०२–११६) भी इसी रसमें है। स्वयंप्रभा और त्रिपृष्ठके विवाहमें शृङ्गार तथा कुपित अश्वग्रीव और विद्याधर राजाओंकी गर्वोक्तिसे वीर रसकी उद्भूति होती है। रणक्षेत्रमें दोनों ओरकी सेनाओंमें युद्ध होनेपर वीर रसका परिपाक होता है। अश्वग्रीवकी सेनाका प्रयाण तथा विश्वनन्दीको आता देख भयसे काँपता हुआ विशाखनन्दी जब कपित्थके वृक्ष पर चढ़कर प्राण संरक्षण करना चाहता है, तब भयानक रसका दृश्य उपस्थित होता है (सर्ग ४।७७)।

यद्यपि शांतिनाथपुराणमें भी अंगीरसके रूपमें मुख्यतः शान्त रसका वर्णन हुआ है पर अन्य रसोंका वर्णन भी अंग रूपमें हुआ है। चक्रवर्ती दयितारि और अपराजित तथा अनन्तवीर्यके युद्ध प्रसंगमें वीर रसका वर्णन हुआ है। दयितारि और गायिकाओंके प्रसंगमें तथा सहस्रायुद्धकी जलकीड़ामें शृंगार रसका वर्णन है। वैराग्य प्रसंग प्रचुरतासे वर्णित है। राजा स्मितिसागरने भगवान स्वयंप्रभके समवसरणमें पुरुषार्थको सिद्ध करनेवाले धर्मको सुनकर ज्येष्ठ पुत्रको राज्यलक्ष्मी सौंपकर दीक्षा लेली (१।६९–७२)। छठे सर्गमें सुमति एक देवीसे पूर्वभव सुनकर संसारसे विरक्त हो गई अर्जिका बन गयी। चक्रवर्ती शान्ति जिनेन्द्रके वैराग्य प्रसंग आदिमें शान्त रसका वर्णन हुआ है।

महाकवि असगने अपने पूर्ववर्ती साहित्यसागरका अच्छी तरह अवगाहन किया, अतः उनकी रचनाओं पर पूर्ववर्ती कवियोंका प्रभाव परिलक्षित होता है। कुन्द-कुन्द, पूज्यपाद तथा अकलंक आदिके सिद्धान्त ग्रन्थोंका प्रभाव उनकी रचनाओं पर पड़ा। रघुवंश, कुमारसम्भव, शिशुपालवध, चन्द्रप्रभचरित तथा किरातार्जुनीयके कितने ही भाव असंगने ग्रहण किये हैं। वर्धमानचरितके श्लोकोंका साम्य जीवन्धर चम्पू और धर्मशर्माभ्युदयमें मिलता है। यहाँ यह शोधका विषय है कि किसने किससे भाव ग्रहण किये हैं। महाकवि असगने भी अपने परवर्ती कवियों पर अपनी छाप छोड़ी है। केशीराज (१२०० ई०)ने शब्दमणिदर्पणमें असगकी कविताओंमेंसे अनेक उद्धरण लिये हैं। पोन्न पर असगके शान्तिपुराणकी छाप है। नागवर्मा और अकन्ना आदि कवियों पर वर्धमानपुराणका प्रभाव पड़ा है।

महाकविका संस्कृत भाषा पर पूर्ण अधिकार है। कहीं भी भाषा शैथिल्यके दर्शन नहीं होते। रसानुकूल भाषाका प्रयोग किया गया है। कहीं अल्पसमासवाले, कहीं बृहत् समासवाले पदोंका प्रयोग हुआ है। ग्रन्थोंमें शब्दसौष्ठव और अलंकरणकी रमणीयता सर्वत्र पाई जाती है। बाह्य सौन्दर्य वर्णनके साथ ही

१. स्वयंप्रभामनुमरणार्थमुद्यतां वलस्तदा स्वयमुपसान्त्वनोदितैः।
इदं पुनर्भवशतहेतुरात्मनो निरर्थकं व्यवसितमित्यवारयत् ॥१०–८७॥

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मानव हृदयस्थ मनोभावोंका तथा विभिन्न दशाओंमें उत्पन्न होनेवाली चेष्टाओंका वर्णन हुआ है। राग, द्वेष, हर्ष, विषाद तथा प्रेम, करुणा आदिका समावेश बड़ी सूक्ष्मताके साथ सर्वत्र हुआ है। कवि अपने पात्रोंके अन्तस्तलमें प्रवेश कर अवस्थाविशेषमें होनेवाली उसकी मानसिक प्रतिक्रियाओंका सूक्ष्म विश्लेषण करता है तथा उचित पदविन्यासके द्वारा अभिव्यक्ति देता है। कविकी रचनायें ऐतिहासिक, पौराणिक तथा शास्त्रीय आदि अनेक दृष्टियोंसे श्रेष्ठ हैं।

यद्यपि असग कविकी दो कृतियाँ ही उपलब्ध हैं, तथापि ये कविको अमरत्व प्रदान करने तथा काव्यरसकी विजयध्वजाको सदैव फहराते रहनेके लिये पर्याप्त हैं। इन रचनाओं पर गहन शोध कार्य प्रगति पथ पर है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org